**मूरख कीन ड्रिसनि, सनमुख सुपेरियुनि खे,**
**अविद्या जीअ अंधा कया, ड्रिनो पदु पिरियुनि**
**भरम मंझि भुली करे, था पना नितु पढ़नि,**
**तप तीरथ बिरित नेम, जग़ जुहिदु कयो जाग़नि,**
**गुफा बन पहाड़ में बुख उञ दुख सहनि,**
**नाना बेख धरे करे था देहि अमोल दहनि,**
**बिना साथ-संगति जे, सभि वहनि मंझि वहनि,**
**के लखाया लहनि, सामी सुपेरियुनि खे.**

*अज्ञानी, मूर्ख, नासमझ मनुष्यों के संबंध में सामी साहब कहते हैं कि अज्ञान के कारण वे प्रियतम परमेश्वर को अपने सामने खड़ा हुआ देखकर भी नहीं देखते। अविद्या/अज्ञान ने तो सभी जीवों को अंधा कर दिया है। परिणाम स्वरूप वे उस आवरण/पर्दे को हटाकर प्रियतम परमेश्वर को देख नहीं पाते। अज्ञानी जन भ्रम और संशयों में पड़ गये हैं। परमात्मा को पाने के लिए वे यथार्थ मार्ग छोड़ कर बड़े-बड़े ग्रंथ पढ़ने लगे हैं, नित्य नियमानुसार तपस्या करने लगे हैं और तीर्थ स्थानों पर भी जाने लगे हैं। कुछ अज्ञानी जीव पहाड़, गुफा और जंगल आदि निर्जन स्थानों पर जा कर तपस्या करते हैं। कुछ तो अपने शरीर को क्लेश, यातनाएँ आदि देकर अपनी देह को शुद्ध करने का प्रयत्न करते हैं। कुछ लोग नाना प्रकार के वेश/भेस धारण कर अपने अनमोल शरीर (देह) को ही जलाने लगते हैं। ऐसे अज्ञानी जीव साधु संत अथवा सतगुरु की संगत करने की अपेक्षा किसी दरिया के प्रवाह की तरह मात्र बहते रहते हैं। इसलिए परमात्मा से दूर ही रह जाते हैं। वस्तुत: प्रियतम परमात्मा को वे मनुष्य ही पा सकते हैं, जिन्होंने सत्संग द्वारा, संत-सतगुरु की कृपा से अपने ही हृदय में परमात्मा को पहचान लिया है।*

इस श्लोक द्वारा सामी साहब पुन: जतलाना चाहते हैं कि अज्ञानी जीव ईश्वर को पाने के लिए बाह्याचार, बाह्याडंबर, कर्मकांड आदि में उलझकर व्यर्थ ही अपना जीवन बर्बाद कर रहे हैं। परमेश्वर की प्राप्ति बाह्य साधनों द्वारा नहीं होती अपितु अपने ही हृदय में ढूँढने से होती है। परमेश्वर हमारे अंदर ही है।

**सुमिरन तू घट में करै, घट ही में करतार।**
**घट ही भीतर पाइए, सुरति शब्द भंडार॥**

■